ISSN (ELECTRONIC): 2945-3135

विनय शील & प्रो० विश्वनाथ मिश्रा (2026). ***धार्मिक परिवर्तन और सामाजिक संबंधों का पुनर्संरचना: नव बौद्ध दलितों के वैवाहिक एवं सामुदायिक व्यवहार का अध्ययन.*** International Journal of Multidisciplinary Research & Reviews. 5(4). 436-456.

INTERNATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH & REVIEWS

journal homepage: www.ijmrr.online/index.php/home

धार्मिक परिवर्तन और सामाजिक संबंधों का पुनर्संरचना: नव बौद्ध दलितों के वैवाहिक एवं सामुदायिक व्यवहार का अध्ययन

विनय शील[1], प्रो० विश्वनाथ मिश्रा[2]

[1]सहायक आचार्य, समाजशास्त्र, सी० एस० एन० पी० जी० कॉलेज, हरदोई।

[2]आचार्य, समाजशास्त्र विभाग, कालीचरण पी०जी० कॉलेज, लखनऊ।

How to Cite the Article: विनय शील & प्रो० विश्वनाथ मिश्रा (2026). ***धार्मिक परिवर्तन और सामाजिक संबंधों का पुनर्संरचना: नव बौद्ध दलितों के वैवाहिक एवं सामुदायिक व्यवहार का अध्ययन.*** International Journal of Multidisciplinary Research & Reviews. 5(4). 436-456.

DOI: https://doi.org/10.56815/ijmrr.v5i4.2026.436-456

Keywords	*Abstract*
नव-बौद्ध, ***दलित,*** ***धार्मिक परिवर्तन,*** ***विवाह,*** ***सामुदायिक संबंध,*** ***आंबेडकरवाद***	यह शोध-पत्र भारत में दलितों के धार्मिक परिवर्तन, विशेषतः डॉ. भीमराव आंबेडकर द्वारा प्रेरित नव-बौद्ध आंदोलन, के संदर्भ में वैवाहिक और सामुदायिक संबंधों की पुनर्संरचना का समाजशास्त्रीय अध्ययन प्रस्तुत करता है। अध्ययन का मुख्य उद्देश्य यह समझना है कि हिंदू जाति-व्यवस्था से वैचारिक और धार्मिक विच्छेद के रूप में बौद्ध धर्म ग्रहण करने से दलित समुदायों के विवाह, रिश्तेदारी, सामुदायिक एकजुटता, लैंगिक भूमिकाओं और सांस्कृतिक प्रतीकों में किस प्रकार परिवर्तन आया। शोध की पद्धति गुणात्मक-व्याख्यात्मक है, जिसमें ऐतिहासिक ग्रंथों, एथ्नोग्राफिक अध्ययनों, जीवन-कथाओं, नीतिगत दस्तावेजों और प्रकाशित शोध-सामग्री का थीमैटिक विश्लेषण किया गया है। अध्ययन से स्पष्ट होता है कि

The work is licensed under a Creative Commons Attribution Non Commercia 4.0 International License

विनय शील & प्रो० विश्वनाथ मिश्रा (2026). ***धार्मिक परिवर्तन और सामाजिक संबंधों का पुनर्संरचना: नव बौद्ध दलितों के वैवाहिक एवं सामुदायिक व्यवहार का अध्ययन.*** International Journal of Multidisciplinary Research & Reviews. 5(4). 436-456.

	नव-बौद्ध धर्मांतरण केवल धार्मिक पहचान का परिवर्तन नहीं है, बल्कि यह अपमानजनक जाति-नियत सामाजिक संबंधों के विरुद्ध सम्मान, समानता और सामूहिक गरिमा पर आधारित वैकल्पिक सामाजिकता के निर्माण का प्रयास है। तथापि, विवाह-संबंधों, पारिवारिक पितृसत्ता, जाति-चिह्नित रिश्तेदारी और राज्य की आरक्षण-व्यवस्था जैसी संस्थागत शक्तियाँ इस परिवर्तन को आंशिक और जटिल बनाती हैं। निष्कर्षतः, नव-बौद्ध दलितों के बीच सामाजिक संबंधों का पुनर्गठन एक रैखिक प्रक्रिया नहीं, बल्कि प्रतिरोध, अनुकूलन और पुनर्संयोजन की बहुस्तरीय प्रक्रिया है।

प्रस्तावना

भारतीय समाज में जाति केवल सामाजिक स्तरीकरण की प्रणाली नहीं रही है; यह जन्म, श्रम, सम्मान, धार्मिक अधिकार, भोजन, निवास, विवाह और सामाजिक संपर्क तक को नियंत्रित करने वाली संरचना रही है। दलित समुदायों के लिए यह संरचना विशेष रूप से बहिष्करण, अपमान और असमानता का स्रोत रही। इसी पृष्ठभूमि में दलित धार्मिक परिवर्तन को समझना आवश्यक है। यह परिवर्तन केवल आध्यात्मिक शरण ग्रहण करने का प्रश्न नहीं था, बल्कि जाति-आधारित अधीनता से बाहर निकलकर एक नए नैतिक-सामाजिक संसार की खोज भी था (Ambedkar, 1936/2014; Jaffrelot, 2005; Omvedt, 2003).

डॉ. भीमराव आंबेडकर ने 14 अक्टूबर 1956 को नागपुर में अपने अनुयायियों के साथ बौद्ध धर्म ग्रहण कर भारतीय सामाजिक इतिहास में एक निर्णायक हस्तक्षेप किया। यह घटना प्रतीकात्मक और राजनीतिक दोनों अर्थों में महत्त्वपूर्ण थी, क्योंकि आंबेडकर ने धर्मांतरण को जाति-विरोधी सामाजिक न्याय की रणनीति के रूप में रखा। उपलब्ध अध्ययनों के अनुसार उस ऐतिहासिक धर्म-दीक्षा समारोह में लगभग पाँच लाख लोग उपस्थित थे, और इस घटना ने बाद के दशकों में नव-बौद्ध पहचान को दलित स्वाभिमान, संगठन और वैचारिक पुनर्जन्म से जोड़ दिया (Zelliot, 2001; Jaffrelot, 2005).

आंबेडकरवादी नव-बौद्ध आंदोलन ने हिंदू धर्म की जाति-आधारित धार्मिक वैधता का प्रतिरोध करते हुए बौद्ध धर्म को समानता, बंधुत्व, तर्कशीलता और नैतिक समुदाय के रूप में पुनर्परिभाषित किया। आंबेडकर के लिए धर्म का अर्थ अलौकिकता से अधिक सामाजिक नैतिकता था; इसलिए

The work is licensed under a Creative Commons Attribution Non Commercia 4.0 International License

विनय शील & प्रो० विश्वनाथ मिश्रा (2026). ***धार्मिक परिवर्तन और सामाजिक संबंधों का पुनर्संरचना: नव बौद्ध दलितों के वैवाहिक एवं सामुदायिक व्यवहार का अध्ययन.*** International Journal of Multidisciplinary Research & Reviews. 5(4). 436-456.

नव-बौद्ध धर्मांतरण दलितों के लिए एक ऐसी सामुदायिक पहचान का निर्माण था जो अपमान के बजाय गरिमा पर आधारित हो (Blackburn, 1993; Ambedkar, 1957/2011).

सामाजिक संबंधों की पारंपरिक संरचना—विशेषकर जाति-अंतर्विवाह, श्रेणीबद्ध रिश्तेदारी, सामाजिक दूरी, अस्पृश्यता, और समुदाय-आधारित बहिष्कार—भारतीय समाज में जाति व्यवस्था को पुनरुत्पादित करती रही है। विवाह इस व्यवस्था का केंद्रीय तंत्र है, क्योंकि जाति की निरंतरता मुख्यतः एंडोगैमी, यानी जाति के भीतर विवाह, से सुनिश्चित होती है। भारत में आज भी अंतर्जातीय विवाह सीमित हैं; IHDS के अनुसार लगभग 95 प्रतिशत विवाह जाति-सीमाओं के भीतर होते हैं। अतः यदि कोई समुदाय धार्मिक परिवर्तन के माध्यम से जाति से मुक्ति का दावा करता है, तो यह देखना आवश्यक है कि उसके वैवाहिक व्यवहार और सामुदायिक जीवन में वास्तविक परिवर्तन किस सीमा तक आया (Tamalapakula, 2019).

इसी से यह शोध-समस्या उभरती है कि क्या नव-बौद्ध दलितों का धार्मिक परिवर्तन सामाजिक संबंधों की संरचना—विशेषकर विवाह, परिवार, रिश्तेदारी और समुदाय—को मूलतः रूपांतरित करता है, या केवल नई पहचान के भीतर पुराने सामाजिक पैटर्न नए रूप में बने रहते हैं? दूसरे शब्दों में, क्या बौद्ध धर्म ग्रहण करना जाति-समाज से सामाजिक विच्छेद है, या जाति-चिह्नित जीवन-विश्व का पुनर्संगठन?

शोध समस्या

नव-बौद्ध दलितों के धार्मिक परिवर्तन को प्रायः राजनीतिक मुक्ति, आत्मसम्मान और सांस्कृतिक पुनर्जन्म के रूप में पढ़ा गया है, परंतु वैवाहिक और सामुदायिक व्यवहार के स्तर पर उसके प्रभाव का व्यवस्थित समाजशास्त्रीय विश्लेषण अपेक्षाकृत कम मिलता है। विशेषतः यह प्रश्न खुला रहता है कि नव-बौद्ध पहचान बनने के बाद भी विवाह, रिश्तेदारी, लिंग और सामुदायिक नेटवर्क किस प्रकार संचालित होते हैं।

उद्देश्य

1. दलितों के नव-बौद्ध धर्मांतरण की ऐतिहासिक और समाजशास्त्रीय पृष्ठभूमि का विश्लेषण करना।

The work is licensed under a Creative Commons Attribution Non Commercia 4.0 International License

विनय शील & प्रो० विश्वनाथ मिश्रा (2026). ***धार्मिक परिवर्तन और सामाजिक संबंधों का पुनर्संरचना: नव बौद्ध दलितों के वैवाहिक एवं सामुदायिक व्यवहार का अध्ययन.*** International Journal of Multidisciplinary Research & Reviews. 5(4). 436-456.

2. नव-बौद्ध दलितों के वैवाहिक व्यवहार में आए परिवर्तनों का अध्ययन करना।
3. पारिवारिक, रिश्तेदारी और सामुदायिक संबंधों के पुनर्संरचना की पड़ताल करना।
4. नव-बौद्ध समुदायों में लैंगिक भूमिकाओं और महिलाओं की स्थिति में परिवर्तन का विश्लेषण करना।
5. आंबेडकरवादी दृष्टिकोण के आलोक में धार्मिक परिवर्तन और सामाजिक न्याय के संबंध को समझना।

शोध प्रश्न

1. नव-बौद्ध धर्मांतरण ने दलितों के वैवाहिक व्यवहार और जाति-अंतर्विवाह की प्रवृत्तियों को किस सीमा तक प्रभावित किया है?
2. क्या नव-बौद्ध पहचान ने परिवार, रिश्तेदारी और सामुदायिक संबंधों में नई नैतिकता और सामूहिकता का निर्माण किया है?
3. नव-बौद्ध समुदायों में महिलाओं की भूमिका, एजेंसी और सामाजिक स्थिति में क्या परिवर्तन दिखाई देते हैं?
4. धार्मिक परिवर्तन के बाद भी कौन-सी जाति-आधारित और संरचनात्मक सीमाएँ बनी रहती हैं?

साहित्य समीक्षा

धर्मांतरण और सामाजिक परिवर्तन पर उपलब्ध साहित्य का एक महत्त्वपूर्ण हिस्सा इस बात पर केंद्रित है कि धार्मिक परिवर्तन हाशिये पर स्थित समुदायों के लिए सम्मान, पहचान और सामूहिक शक्ति का स्रोत बन सकता है। आंबेडकरवादी परंपरा में धर्मांतरण को 'मोक्ष' के आध्यात्मिक अर्थ में नहीं, बल्कि सामाजिक लोकतंत्र के नैतिक आधार के रूप में देखा गया है। Omvedt (2003) और Jaffrelot (2005) ने दिखाया है कि बौद्ध धर्म आंबेडकर के लिए इसलिए आकर्षक था क्योंकि यह ब्राह्मणवादी पदानुक्रम की वैधता को अस्वीकार करता है और समानता-आधारित नैतिक समुदाय की कल्पना करता है। Zelliot (2001) ने आंबेडकर आंदोलन के सामाजिक इतिहास को रेखांकित करते

The work is licensed under a Creative Commons Attribution Non Commercia 4.0 International License

विनय शील & प्रो० विश्वनाथ मिश्रा (2026). ***धार्मिक परिवर्तन और सामाजिक संबंधों का पुनर्संरचना: नव बौद्ध दलितों के वैवाहिक एवं सामुदायिक व्यवहार का अध्ययन.*** International Journal of Multidisciplinary Research & Reviews. 5(4). 436-456.

हुए दिखाया कि धर्मांतरण ने दलितों के भीतर राजनीतिक आत्मविश्वास और सांस्कृतिक स्वाभिमान को बढ़ाया।

नव-बौद्ध दलितों की पहचान और सामाजिक गतिशीलता पर हुए अध्ययनों में यह स्पष्ट हुआ है कि धर्मांतरण के बाद "अछूत" या "महार" जैसी अपमानजनक पहचानों के स्थान पर "बौद्ध", "आंबेडकरवादी" या "दलित-बौद्ध" जैसी आत्म-निर्मित पहचानें उभरती हैं। Beltz (2005) ने महार समुदाय के बौद्ध बनने की प्रक्रिया में धार्मिक अनुष्ठानों, स्मृति, प्रतीकों और सामाजिक संस्थानों की भूमिका को विश्लेषित किया। Blackburn (1993) ने आंबेडकर की उस दृष्टि को रेखांकित किया जिसमें धर्म, रिश्तेदारी और नैतिक समुदाय परस्पर जुड़े हुए हैं। उनके अनुसार बौद्ध धर्म ग्रहण करना केवल धर्म बदलना नहीं, बल्कि एक ऐसे भाईचारे का निर्माण है जो समुदाय को अन्याय के विरुद्ध सामूहिक उत्तरदायित्व देता है।

हाल के एथ्नोग्राफिक अध्ययनों ने इस पहचान-निर्माण को और जटिल रूप में सामने रखा है। Mensikova (2023) के अनुसार महाराष्ट्र के आंबेडकरवादी बौद्धों के बीच "दलित", "बौद्ध" और "आंबेडकरवादी" जैसी पहचानों के बीच निरंतर वार्ता और तनाव चलता रहता है। कुछ लोग "दलित" शब्द को जाति-स्मृति और संघर्ष का सूचक मानते हैं, जबकि अन्य "बौद्ध" पहचान को जाति से बाहर निकलने के आधुनिक प्रतीक के रूप में ग्रहण करते हैं। इससे स्पष्ट होता है कि नव-बौद्ध पहचान एकसार नहीं, बल्कि बहुस्तरीय और संदर्भनिष्ठ है।

वैवाहिक व्यवहार पर उपलब्ध साहित्य अपेक्षाकृत कम है, परंतु जो अध्ययन उपलब्ध हैं वे यह संकेत देते हैं कि विचारधारात्मक रूप से जाति-विरोधी होने के बावजूद व्यावहारिक स्तर पर विवाह-संबंधों में अंतर्विवाह की प्रवृत्ति बनी रहती है। Tamalapakula (2019) ने दलित राजनीति में अंतर्जातीय विवाह को जाति-विनाश का साधन माना जाने के बावजूद, उसके साथ जुड़े सामाजिक जोखिम, सम्मान-हिंसा, वर्गीय असमानता और पितृसत्ता की ओर ध्यान खींचा। यह निष्कर्ष नव-बौद्ध समुदायों पर भी लागू होता है, जहाँ बौद्ध वैवाहिक संस्कार अपनाने के बावजूद विवाह-पसंदगी अक्सर उसी विस्तृत सामाजिक नेटवर्क के भीतर सीमित रहती है जो ऐतिहासिक रूप से किसी विशिष्ट जाति-समूह से जुड़ा रहा है।

The work is licensed under a Creative Commons Attribution Non Commercia 4.0 International License

विनय शील & प्रो० विश्वनाथ मिश्रा (2026). ***धार्मिक परिवर्तन और सामाजिक संबंधों का पुनर्संरचना: नव बौद्ध दलितों के वैवाहिक एवं सामुदायिक व्यवहार का अध्ययन.*** International Journal of Multidisciplinary Research & Reviews. 5(4). 436-456.

लैंगिक आयाम पर साहित्य विशेष रूप से महत्वपूर्ण है। Hibbs (2013) और Choudhary (2013) ने दिखाया है कि नव-बौद्ध धर्मांतरण ने महिलाओं के लिए शिक्षा, आत्माभिव्यक्ति और सार्वजनिक भागीदारी के नए अवसर खोले, किंतु इससे पितृसत्तात्मक संरचनाएँ स्वतः समाप्त नहीं हुईं। महिलाएँ एक ओर बौद्ध पहचान, शिक्षा और आंबेडकरवादी नैतिकता के माध्यम से स्वतंत्रता और आत्मसम्मान अर्जित करती हैं; दूसरी ओर परिवार, विवाह और घरेलू श्रम के स्तर पर उन्हें अभी भी अधीनस्थ भूमिकाओं से संघर्ष करना पड़ता है।

दलित महिलाओं की शिक्षा और लेखन पर Paik (2014) तथा Rege (2006) का कार्य यह दर्शाता है कि दलित-स्त्री अनुभव जाति और लिंग दोनों के संयुक्त दमन से निर्मित होता है। यह दृष्टिकोण नव-बौद्ध महिलाओं की स्थिति समझने में सहायक है, क्योंकि धार्मिक परिवर्तन के बाद भी घरेलू सत्ता-संबंध, वैवाहिक नियंत्रण और समुदाय के भीतर लैंगिक असमानताएँ समाप्त नहीं हो जातीं। बल्कि कई बार नई सामुदायिक पहचान के भीतर भी स्त्रियों से सांस्कृतिक नैतिकता का बोझ उठाने की अपेक्षा की जाती है।

शोणध अंतराल

उपलब्ध साहित्य से यह स्पष्ट है कि नव-बौद्ध आंदोलन, दलित पहचान, सांस्कृतिक प्रतीकवाद और राजनीतिक चेतना पर पर्याप्त कार्य हुआ है; किंतु **नव-बौद्ध दलितों के वैवाहिक एवं सामुदायिक व्यवहार** को केंद्र में रखकर, विशेषतः विवाह-प्रथाओं, रिश्तेदारी संरचना, सामुदायिक नेटवर्क, लैंगिक शक्ति-संबंध और सांस्कृतिक पुनर्संरचना के अंतर्संबंधों का समेकित अध्ययन अभी भी सीमित है। भारतीय संदर्भ में यह अभाव और स्पष्ट हो जाता है, क्योंकि अधिकांश शोध या तो धर्मांतरण के ऐतिहासिक-राजनीतिक महत्व पर केंद्रित हैं या दलित आंदोलन की वैचारिकी पर। इस शोध-पत्र का प्रयास इसी शून्य को भरना है।

सैद्धान्तिक ढांचा

इस अध्ययन का सैद्धांतिक ढाँचा बहु-आयामी है, क्योंकि धार्मिक परिवर्तन और सामाजिक संबंधों की पुनर्संरचना को किसी एक सिद्धांत से पर्याप्त रूप से नहीं समझा जा सकता।

The work is licensed under a Creative Commons Attribution Non Commercia 4.0 International License

विनय शील & प्रो० विश्वनाथ मिश्रा (2026). ***धार्मिक परिवर्तन और सामाजिक संबंधों का पुनर्संरचना: नव बौद्ध दलितों के वैवाहिक एवं सामुदायिक व्यवहार का अध्ययन.*** International Journal of Multidisciplinary Research & Reviews. 5(4). 436-456.

सामाजिक परिवर्तन सिद्धान्त

सामाजिक परिवर्तन सिद्धांत यह मानता है कि समाज स्थिर नहीं होता, बल्कि आर्थिक, सांस्कृतिक, तकनीकी, राजनीतिक और वैचारिक प्रक्रियाओं के कारण निरंतर बदलता रहता है (Ogburn, 1922). नव-बौद्ध धर्मांतरण को इस दृष्टि से देखें तो यह सांस्कृतिक और नैतिक परिवर्तन की एक सचेत प्रक्रिया है। यहाँ परिवर्तन किसी बाहरी आधुनिकता का स्वाभाविक परिणाम नहीं, बल्कि उत्पीड़ित समुदाय द्वारा संचालित वैचारिक हस्तक्षेप है। आंबेडकर के लिए बौद्ध धर्म अपनाना सामाजिक प्रगति, तर्कशीलता और समानता पर आधारित एक नए सामाजिक ढाँचे की ओर कदम था। इसलिए नव-बौद्ध समुदायों में विवाह-संस्कार, नामकरण, सामूहिक समारोह, बौद्ध विहार और सार्वजनिक स्मृति-स्थलों का निर्माण सामाजिक परिवर्तन के संस्थागत रूप माने जा सकते हैं (Omvedt, 2003; Zelliot, 2001).

पहचान सिद्धांत / सामाजिक पहचान दृष्टिकोण

पहचान सिद्धांत के अनुसार व्यक्ति और समूह अपनी सामाजिक स्थिति, सम्मान और सामूहिकता को प्रतीकों, श्रेणियों और पारस्परिक मान्यता के माध्यम से निर्मित करते हैं (Tajfel & Turner, 1979). नव-बौद्ध धर्मांतरण इस अर्थ में पहचान-परिवर्तन की प्रक्रिया है जिसमें "अस्पृश्य" की थोपे गए पहचान को अस्वीकार कर "बौद्ध" या "आंबेडकरवादी" के रूप में स्व-परिभाषित सामूहिक पहचान निर्मित की जाती है। Mensikova (2023) ने दिखाया है कि यह पहचान स्थिर नहीं, बल्कि लगातार वार्तित होती है; कुछ लोग संघर्षशील "दलित" पहचान को बनाए रखते हैं, तो कुछ "बौद्ध" पहचान के माध्यम से जाति-स्मृति से दूरी बनाना चाहते हैं। इससे स्पष्ट है कि नव-बौद्धता केवल धर्म नहीं, बल्कि पहचान-राजनीति का क्षेत्र भी है।

संरचनात्मक प्रकार्यवाद

संरचनात्मक-प्रकार्यवाद समाज को परस्पर संबद्ध संस्थाओं—परिवार, धर्म, विवाह, शिक्षा, समुदाय—की ऐसी व्यवस्था के रूप में देखता है जो सामाजिक स्थिरता बनाए रखती है (Parsons, 1951; Merton, 1968). इस दृष्टिकोण से धर्म और विवाह समाज में एकीकरणकारी भूमिका निभाते हैं। किंतु नव-बौद्ध संदर्भ में यह प्रश्न महत्वपूर्ण हो जाता है कि क्या धर्मांतरण पुरानी संरचनाओं

The work is licensed under a Creative Commons Attribution Non Commercia 4.0 International License

विनय शील & प्रो० विश्वनाथ मिश्रा (2026). ***धार्मिक परिवर्तन और सामाजिक संबंधों का पुनर्संरचना: नव बौद्ध दलितों के वैवाहिक एवं सामुदायिक व्यवहार का अध्ययन.*** International Journal of Multidisciplinary Research & Reviews. 5(4). 436-456.

का विकल्प निर्मित करता है या केवल उन्हें नए नैतिक अर्थ देता है? उदाहरणतः बौद्ध विवाह-संस्कार ब्राह्मणीय कर्मकांड का विकल्प प्रस्तुत करते हैं, परंतु परिवार और रिश्तेदारी की कई भूमिकाएँ बनी रहती हैं। अतः संरचनात्मक-कार्यवाद यहाँ यह समझने में सहायक है कि कौन-सी संस्थाएँ परिवर्तित होती हैं, कौन-सी पुनर्रचित होती हैं, और कौन-सी बनी रहती हैं।

संघर्ष सिद्धान्त

संघर्ष सिद्धांत के अनुसार समाज मूलतः शक्ति, संसाधन और प्रभुत्व के असमान संबंधों से निर्मित होता है (Marx, 1976). जाति-व्यवस्था भी इसी अर्थ में एक प्रभुत्वकारी सामाजिक संरचना है, जिसमें धार्मिक वैधता के माध्यम से श्रम-विभाजन और सामाजिक अधीनता को स्थिर किया जाता है। नव-बौद्ध धर्मांतरण इस प्रभुत्व के विरुद्ध प्रतिरोध की प्रक्रिया है। यह केवल व्यक्तिगत श्रद्धा का मामला नहीं, बल्कि सामाजिक शक्ति-संबंधों को चुनौती देने वाला सामूहिक कदम है। विवाह के क्षेत्र में भी अंतर्जातीय विवाह की राजनीति, ब्राह्मणीय कर्मकांड का अस्वीकार, और बौद्ध वैवाहिक संस्कार अपनाना प्रभुत्व-रूपी सांस्कृतिक पूँजी के विरुद्ध संघर्ष के रूप में पढ़ा जा सकता है (Tamalapakula, 2019).

अम्बेडकर दृष्टिकोण

आंबेडकरवादी दृष्टिकोण इस अध्ययन का केंद्रीय वैचारिक आधार है। आंबेडकर ने धर्म को सामाजिक नैतिकता, लोकतंत्र और बंधुत्व के आधार के रूप में समझा। उनके लिए जाति-विनाश केवल कानूनी सुधार से संभव नहीं था; इसके लिए ऐसी नैतिक-सांस्कृतिक क्रांति आवश्यक थी जो मनुष्य को मनुष्य के रूप में मान्यता दे। बौद्ध धर्म इसी कारण उनके लिए "समानता का धर्म" था। 22 प्रतिज्ञाएँ केवल धार्मिक व्रत नहीं थीं; वे हिंदू जाति-आधारित प्रतीकों, कर्मकांडों और आध्यात्मिक अधीनता से संपूर्ण विच्छेद की सार्वजनिक घोषणा थीं। इस दृष्टिकोण से नव-बौद्ध वैवाहिक और सामुदायिक व्यवहार को समझना संभव होता है, क्योंकि यहाँ धार्मिक परिवर्तन सामाजिक संबंधों के लोकतंत्रीकरण की परियोजना से जुड़ा है (Ambedkar, 1957/2011; Blackburn, 1993).

The work is licensed under a Creative Commons Attribution Non Commercia 4.0 International License

विनय शील & प्रो० विश्वनाथ मिश्रा (2026). ***धार्मिक परिवर्तन और सामाजिक संबंधों का पुनर्संरचना: नव बौद्ध दलितों के वैवाहिक एवं सामुदायिक व्यवहार का अध्ययन.*** International Journal of Multidisciplinary Research & Reviews. 5(4). 436-456.

शोध पद्धति

यह अध्ययन **गुणात्मक (Qualitative), व्याख्यात्मक (Interpretive) और विश्लेषणात्मक (Analytical)** शोध-डिज़ाइन पर आधारित है। चूँकि इस शोध-पत्र का वर्तमान संस्करण द्वितीयक स्रोतों पर आधारित है, इसलिए इसका मुख्य डेटा-स्रोत ऐतिहासिक ग्रंथ, शोध-पत्र, एथ्नोग्राफिक अध्ययन, जीवन-कथाएँ, नीति-दस्तावेज, जनगणना सामग्री और प्रकाशित साक्षात्कार-आधारित अध्ययन हैं। इन स्रोतों का विश्लेषण **Thematic Analysis** के माध्यम से किया गया है।

शोध अभिकल्प

यह अध्ययन मूलतः एक **qualitative thematic study** है। इसका लक्ष्य सांख्यिकीय सामान्यीकरण नहीं, बल्कि सामाजिक अर्थों, अनुभवों और संरचनात्मक प्रक्रियाओं की व्याख्या करना है। धार्मिक परिवर्तन और सामाजिक संबंधों के बीच के अंतर्संबंध को समझने के लिए गुणात्मक पद्धति उपयुक्त है, क्योंकि यह प्रतीकों, अनुभवों, सामुदायिक स्मृतियों और वैचारिक पुनर्गठन को पकड़ती है।

निदर्शन पद्धति

यदि इस अध्ययन को क्षेत्रकार्य के साथ विस्तारित किया जाए, तो **purposive sampling** और **snowball sampling** सर्वाधिक उपयुक्त होंगे। purposive sampling द्वारा महाराष्ट्र, उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश और अन्य राज्यों के नव-बौद्ध समुदायों से ऐसे प्रतिभागियों का चयन किया जा सकता है जो विवाह, परिवार, शिक्षा, समुदाय-नेतृत्व और महिला-अनुभवों पर प्रकाश डाल सकें। snowball sampling उन समुदायों में उपयोगी होगी जहाँ शोधकर्ता को विश्वास-आधारित प्रवेश की आवश्यकता हो।

तथ्य संग्रहण

प्राथमिक

- अर्ध-संरचित साक्षात्कार
- सहभागी/असहभागी अवलोकन

The work is licensed under a Creative Commons Attribution Non Commercia 4.0 International License

विनय शील & प्रो० विश्वनाथ मिश्रा (2026). ***धार्मिक परिवर्तन और सामाजिक संबंधों का पुनर्संरचना: नव बौद्ध दलितों के वैवाहिक एवं सामुदायिक व्यवहार का अध्ययन.*** International Journal of Multidisciplinary Research & Reviews. 5(4). 436-456.

- विवाह समारोहों, बौद्ध विहारों और सामुदायिक आयोजनों का अवलोकन

द्वितीयक

- डॉ. आंबेडकर के ग्रंथ
- दलित और नव-बौद्ध आंदोलन पर पुस्तकें
- पीयर-रिव्यू शोध-पत्र
- एथ्नोग्राफिक अध्ययन
- सरकारी दस्तावेज और जनगणना रिपोर्ट
- जीवन-कथाएँ, स्त्री-विमर्श और दलित साहित्य

शोध क्षेत्र

अध्ययन का व्यापक क्षेत्र भारत है, किंतु विश्लेषण का अनुभवजन्य केंद्र उन नव-बौद्ध समुदायों पर है जो विशेष रूप से **महाराष्ट्र** में अधिक संगठित रूप में दिखाई देते हैं। 2011 के आँकड़ों के अनुसार भारत में बौद्ध आबादी लगभग 84 लाख है, जिनमें महाराष्ट्र का हिस्सा अत्यधिक बड़ा है; केवल महाराष्ट्र में लगभग 65.31 लाख बौद्ध दर्ज किए गए। इससे स्पष्ट है कि महाराष्ट्र नव-बौद्ध सामाजिक जीवन को समझने का केंद्रीय क्षेत्र है।

तथ्य विश्लेषण तकनीक

डेटा के विश्लेषण के लिए **Thematic Analysis** का उपयोग किया गया। प्रमुख थीम थीं:

- विवाह और जाति
- परिवार और रिश्तेदारी
- सामुदायिक पहचान
- लैंगिक संबंध
- सांस्कृतिक प्रतीक और रीति-रिवाज

The work is licensed under a Creative Commons Attribution Non Commercia 4.0 International License

विनय शील & प्रो० विश्वनाथ मिश्रा (2026). ***धार्मिक परिवर्तन और सामाजिक संबंधों का पुनर्संरचना: नव बौद्ध दलितों के वैवाहिक एवं सामुदायिक व्यवहार का अध्ययन.*** International Journal of Multidisciplinary Research & Reviews. 5(4). 436-456.

- धार्मिक परिवर्तन और सामाजिक न्याय

इस प्रक्रिया में स्रोतों से आवर्ती पैटर्न, विरोधाभास, वैचारिक संरचनाएँ और अनुभवजन्य संकेत एकत्रित कर उनका तुलनात्मक विश्लेषण किया गया। क्योंकि वर्तमान अध्ययन द्वितीयक स्रोत-आधारित है, अतः प्रत्यक्ष प्रतिभागियों की गोपनीयता का प्रश्न लागू नहीं होता। तथापि, यदि भविष्य में क्षेत्रकार्य किया जाए तो सूचित सहमति, पहचान-गोपनीयता, संवेदनशील विषयों की सावधानीपूर्ण प्रस्तुति और जाति-आधारित जोखिमों के प्रति नैतिक उत्तरदायित्व आवश्यक होगा।

निष्कर्ष एवं विश्लेषण

वैवाहिक व्यवहार में परिवर्तन

नव-बौद्ध धर्मांतरण के बाद विवाह के क्षेत्र में सबसे पहले जो परिवर्तन दिखाई देता है, वह **ब्राह्मणीय कर्मकांड से दूरी** है। अनेक नव-बौद्ध परिवार विवाह में ब्राह्मण पुरोहित, हिंदू देवी-देवता, श्राद्धीय अनुष्ठान और जाति-मान्य कर्मकांडों का उपयोग कम करते हैं; उनकी जगह बुद्ध-वंदना, पंचशील, आंबेडकर-प्रतिमा के समक्ष प्रतिज्ञा, तथा सरल नागरिक-बौद्ध विधि अपनाई जाती है। 22 प्रतिज्ञाओं का सामाजिक अर्थ भी यही है कि विवाह सहित जीवन के महत्वपूर्ण संस्कारों को ब्राह्मणीय मध्यस्थता से मुक्त किया जाए (Ambedkar, 1957/2011).

परंतु वैचारिक परिवर्तन का अर्थ यह नहीं कि विवाह-संबंध पूरी तरह जाति-मुक्त हो गए हैं। उपलब्ध अध्ययनों से संकेत मिलता है कि नव-बौद्ध समुदायों में विवाह अब "हिंदू जाति" के नाम पर नहीं, बल्कि "बौद्ध समुदाय" के भीतर करना अधिक वैध माना जाता है। यह परिवर्तन सतही प्रतीत हो सकता है, पर वास्तव में यह जाति-चिह्नित एंडोगैमी के धार्मिक रूपांतरण का संकेत है: जाति की स्पष्ट भाषा कम होती है, पर समुदाय-आधारित वैवाहिक चयन बना रहता है। विशेषकर ऐतिहासिक रूप से महार-उद्भूत नव-बौद्ध नेटवर्क में विवाह के अवसर प्रायः उन्हीं सामाजिक परिधियों में तलाशे जाते हैं जहाँ साझा आंदोलन-स्मृति, शैक्षिक पृष्ठभूमि और सांस्कृतिक पूँजी मौजूद हो (Beltz, 2005; Blackburn, 1993).

अंतर्जातीय विवाह की प्रवृत्ति को देखें तो नव-बौद्ध वैचारिकी, आंबेडकर के जाति-विनाश के विचार के अनुरूप, सिद्धांततः जाति-बहिर्विवाह का समर्थन करती है। फिर भी Tamalapakula (2019) का

The work is licensed under a Creative Commons Attribution Non Commercia 4.0 International License

विनय शील & प्रो० विश्वनाथ मिश्रा (2026). ***धार्मिक परिवर्तन और सामाजिक संबंधों का पुनर्संरचना: नव बौद्ध दलितों के वैवाहिक एवं सामुदायिक व्यवहार का अध्ययन.*** International Journal of Multidisciplinary Research & Reviews. 5(4). 436-456.

निष्कर्ष महत्वपूर्ण है कि दलित राजनीति में अंतर्जातीय विवाह को मुक्तिकामी प्रतीक माना जाने के बावजूद, सामाजिक जीवन में उसके साथ हिंसा, असुरक्षा, सामाजिक बहिष्कार, वर्गीय अंतर और लैंगिक नियंत्रण जुड़े रहते हैं। यही कारण है कि नव-बौद्ध परिवार अक्सर शिक्षा, नौकरी और वैचारिक समानता को महत्व देते हुए भी वैवाहिक निर्णय में सामाजिक सुरक्षा को प्राथमिकता देते हैं।

यहाँ एक महत्त्वपूर्ण समाजशास्त्रीय बिंदु सामने आता है: नव-बौद्ध विवाह जाति के धार्मिक औचित्य को चुनौती देते हैं, परंतु जाति से उत्पन्न **सामाजिक पूँजी और सुरक्षा-नेटवर्क** को एकदम समाप्त नहीं करते। इसलिए विवाह-संबंधों में पूर्ण बहिर्विवाह के बजाय "समान अनुभव-समूह" के भीतर विवाह की प्रवृत्ति मिलती है। इससे संकेत मिलता है कि सामाजिक परिवर्तन आंशिक है—विवाह की नैतिक भाषा बदलती है, किंतु सामाजिक व्यावहारिकता धीरे-धीरे बदलती है।

पारिवारिक एवं रिश्तेदारी संरचना

Blackburn (1993) ने आंबेडकर की सोच में धर्म, रिश्तेदारी और नैतिक समुदाय के गहरे संबंध को रेखांकित किया है। उनके अनुसार आंबेडकर के लिए बौद्ध धर्म ऐसा नैतिक बंधुत्व था जो समुदाय को अन्याय के विरुद्ध सामूहिक उत्तरदायित्व देता है। इस दृष्टि से नव-बौद्ध परिवार केवल जैविक-रक्त संबंधों तक सीमित नहीं रहते; वे साझा पीड़ा, साझा स्मृति और साझा मुक्ति-परियोजना से जुड़ी "विस्तारित नैतिक रिश्तेदारी" विकसित करते हैं।

फिर भी पारिवारिक संरचना के स्तर पर परिवर्तन असमान है। कई नव-बौद्ध परिवारों में शिक्षा, शहरीकरण और आंबेडकरवादी वैचारिकी ने संयुक्त परिवार की कुछ नियंत्रणकारी प्रवृत्तियों को कम किया है, और दाम्पत्य संबंधों, बच्चों की शिक्षा तथा स्त्री-शिक्षा के प्रति अधिक सहायक रुझान पैदा किए हैं। लेकिन पारिवारिक निर्णयों—विशेषकर विवाह, निवास, संपत्ति और घरेलू श्रम—में पितृसत्तात्मक नियंत्रण अभी भी विद्यमान है। इस प्रकार परिवार नव-बौद्ध संदर्भ में आंशिक रूप से लोकतांत्रिक होता है, पर पूरी तरह समतामूलक नहीं।

रिश्तेदारी की संरचना में एक रोचक परिवर्तन यह है कि बौद्ध विहार, दीक्षाभूमि, आंबेडकर जयंती, धम्मचक्र प्रवर्तन दिवस, अध्ययन-मंडल और सामाजिक संगठनों के माध्यम से "समुदाय-आधारित

The work is licensed under a Creative Commons Attribution Non Commercia 4.0 International License

विनय शील & प्रो० विश्वनाथ मिश्रा (2026). ***धार्मिक परिवर्तन और सामाजिक संबंधों का पुनर्संरचना: नव बौद्ध दलितों के वैवाहिक एवं सामुदायिक व्यवहार का अध्ययन.*** International Journal of Multidisciplinary Research & Reviews. 5(4). 436-456.

संबंध" जैविक संबंधों जितने महत्त्वपूर्ण हो जाते हैं। आंबेडकरवादी सभा-संस्कृति परिवार के बाहर भी आत्मीयता, सहयोग और मार्गदर्शन के नए सूत्र बनाती है। विशेषतः शिक्षित युवाओं के बीच यह नेटवर्क नौकरी, शिक्षा, वैवाहिक संपर्क और सामाजिक सुरक्षा का स्रोत बन सकता है। इस अर्थ में नव-बौद्ध समुदाय रिश्तेदारी का "सिविक" या "आंदोलनकारी" विस्तार प्रस्तुत करते हैं।

सामुदायिक संबंधों का पुनर्संरचना

नव-बौद्ध धर्मांतरण का सबसे प्रभावशाली परिणाम सामुदायिक संबंधों के पुनर्गठन में दिखाई देता है। धर्मांतरण के बाद समुदाय स्वयं को केवल उत्पीड़ित समूह के रूप में नहीं, बल्कि एक ऐतिहासिक-नैतिक समुदाय के रूप में देखने लगता है। बुद्ध, धम्म और आंबेडकर की स्मृति-संरचना सामूहिक पहचान की धुरी बनती है। बुद्ध-विहार, सामूहिक धम्म-दीक्षा, स्मृति-स्थल, प्रतिमा-स्थापन, सामूहिक पाठ और जयंती-उत्सव इस नए समुदाय को दृश्यता देते हैं (Beltz, 2005; Omvedt, 2003).

Mensikova (2023) का अध्ययन यह दिखाता है कि यह सामुदायिकता बहुत मजबूत होने के साथ-साथ अंतर्विरोधों से भरी भी है। महाराष्ट्र के आंबेडकरवादी बौद्धों में "हम कौन हैं?"—दलित, बौद्ध, या आंबेडकरवादी—यह प्रश्न लगातार उपस्थित रहता है। कुछ के लिए "दलित" शब्द संघर्ष और ऐतिहासिक स्मृति का प्रतीक है; कुछ इसे जाति की छाया मानकर त्यागना चाहते हैं। इसी तरह कुछ लोग बौद्ध धर्म को धार्मिक अभ्यास के रूप में जीते हैं, जबकि कुछ इसे तर्कवादी, लगभग 'सेक्युलर' नैतिकता के रूप में ग्रहण करते हैं। परिणामतः सामुदायिक संबंध समानता और बंधुत्व की आकांक्षा से बने होते हुए भी आंतरिक बहसों और सीमांकन से गुजरते हैं।

सामाजिक नेटवर्क की दृष्टि से नव-बौद्ध समुदायों ने शिक्षा, छात्रावासों, अध्ययन मंडलों, बौद्ध संस्थाओं और नागरिक संगठनों के माध्यम से नई सामूहिकता विकसित की है। प्रबुद्धता, संगठन और अधिकार-चेतना से जुड़ी यह सामुदायिकता दलित समाज में **collective pride** या सामूहिक गर्व का निर्माण करती है। Sinha (2020) का तर्क है कि शिक्षित दलितों के बीच सामूहिक गौरव और नेतृत्व की राजनीति सामाजिक गतिशीलता को केवल वर्गीय उन्नति की दृष्टि से नहीं, बल्कि गरिमा-आधारित सामाजिक परिवर्तन के रूप में समझती है। यही तर्क नव-बौद्ध सामुदायिक जीवन पर भी लागू होता है।

The work is licensed under a Creative Commons Attribution Non Commercia 4.0 International License

विनय शील & प्रो० विश्वनाथ मिश्रा (2026). ***धार्मिक परिवर्तन और सामाजिक संबंधों का पुनर्संरचना: नव बौद्ध दलितों के वैवाहिक एवं सामुदायिक व्यवहार का अध्ययन.*** International Journal of Multidisciplinary Research & Reviews. 5(4). 436-456.

फिर भी समुदाय का पुनर्संरचना राज्य, कानून और आरक्षण-व्यवस्था से जटिल रूप से जुड़ा है। 1990 के संशोधन द्वारा बौद्ध धर्म अपनाने वाले अनुसूचित जाति मूल के समुदायों को अनुसूचित जाति के संवैधानिक लाभों के दायरे में शामिल रखा गया। यह कानूनी संरक्षण महत्त्वपूर्ण था, पर इससे एक द्वंद्व भी बना: धार्मिक रूप से "बौद्ध" होने का दावा और प्रशासनिक रूप से "SC" बने रहने की आवश्यकता। कई अध्ययनों में यह तनाव नव-बौद्ध पहचान के भीतर एक प्रकार की प्रशासनिक-जातिगत वापसी के रूप में देखा गया है।

लैंगिक आयाम

नव-बौद्ध आंदोलन के भीतर महिलाओं की स्थिति का प्रश्न विशेष रूप से महत्वपूर्ण है, क्योंकि यदि धार्मिक परिवर्तन समानता का दावा करता है तो उसके प्रभाव को स्त्री-अनुभवों में अवश्य देखा जाना चाहिए। Choudhary (2013) के नागपुर-आधारित अध्ययन में महिलाओं ने शिक्षा को धर्मांतरण का सबसे बड़ा प्रभाव बताया। शिक्षा ने उनमें अधिकार-बोध, आत्मसम्मान और सार्वजनिक उपस्थिति का विकास किया। कई महिलाओं के लिए बौद्ध पहचान ने "हीनता" की मनोवृत्ति को कम किया और उन्हें अपने जीवन को नए अर्थ में देखने का अवसर दिया।

Hibbs (2013) ने नव-बौद्ध दलित महिलाओं की आत्म-प्रतिनिधित्व प्रक्रिया को 'बौद्ध स्त्रीवादी धर्मविज्ञान' के रूप में समझा है। उनके अनुसार दलित महिलाएँ केवल आंदोलन की प्रतीक नहीं रहीं; वे अपनी देह, धर्म, शिक्षा और आत्मकथा के माध्यम से जाति तथा पितृसत्ता दोनों का प्रतिरोध करती हैं। वे आंबेडकरवादी बौद्धता को केवल पुरुष-नेतृत्व वाली राजनीति नहीं रहने देतीं, बल्कि उसे अनुभव, शिक्षा और नैतिक आलोचना के स्तर पर पुनर्परिभाषित करती हैं।

इसके बावजूद नव-बौद्ध समुदायों में पितृसत्ता समाप्त नहीं हो जाती। Choudhary (2013) ने दर्ज किया कि कई महिलाएँ मानती हैं कि पुरुष बौद्ध धर्म की समानतावादी भाषा तो स्वीकार करते हैं, पर व्यवहार में महिलाओं पर नियंत्रण बनाए रखना चाहते हैं। विवाह को स्त्रियाँ कई बार "समझौते" के रूप में अनुभव करती हैं, जहाँ निजी आकांक्षाएँ पारिवारिक अपेक्षाओं के अधीन हो जाती हैं। इसका अर्थ यह है कि धार्मिक परिवर्तन महिलाओं को वैचारिक संसाधन देता है, पर घरेलू सत्ता-संबंधों को तोड़ने के लिए अतिरिक्त सामाजिक-राजनीतिक संघर्ष आवश्यक है।

The work is licensed under a Creative Commons Attribution Non Commercia 4.0 International License

विनय शील & प्रो० विश्वनाथ मिश्रा (2026). ***धार्मिक परिवर्तन और सामाजिक संबंधों का पुनर्संरचना: नव बौद्ध दलितों के वैवाहिक एवं सामुदायिक व्यवहार का अध्ययन.*** International Journal of Multidisciplinary Research & Reviews. 5(4). 436-456.

Paik (2014) और Rege (2006) का व्यापक निष्कर्ष यहाँ पुष्ट होता है कि दलित स्त्रियों की मुक्ति शिक्षा, सार्वजनिक लेखन, सामूहिक संगठन और जाति-लिंग दोनों के विरुद्ध संघर्ष से जुड़ी है। नव-बौद्ध महिलाओं के लिए धर्मांतरण गरिमा का स्रोत अवश्य है, किंतु समानता का अनुभव तभी गहरा होता है जब वह शिक्षा, आर्थिक स्वायत्तता और वैवाहिक निर्णयों में भागीदारी से समर्थित हो।

सांस्कृतिक एवं प्रतीकात्मक परिवर्तन

नव-बौद्ध दलितों के सामाजिक व्यवहार में सांस्कृतिक और प्रतीकात्मक परिवर्तन अत्यंत स्पष्ट हैं। बुद्ध, धम्मचक्र, अशोक स्तंभ, नीला ध्वज, डॉ. आंबेडकर की प्रतिमा, दीक्षाभूमि जैसे स्थल, और धम्मचक्र प्रवर्तन दिवस जैसे आयोजन सामुदायिक अस्तित्व के नए प्रतीक बनते हैं। ये प्रतीक केवल धार्मिक पहचान व्यक्त नहीं करते; वे सामूहिक स्मृति, प्रतिरोध और आधुनिकता के दावों को भी दृश्य रूप देते हैं (Beltz, 2005; Omvedt, 2003).

22 प्रतिज्ञाओं का सांस्कृतिक अर्थ विशेष उल्लेखनीय है। इनमें हिंदू देवी-देवताओं, अवतारवाद, श्राद्ध, ब्राह्मणीय कर्मकांड और असमानता की अस्वीकृति के साथ-साथ समानता, करुणा, पंचशील और बुद्ध के मार्ग का अनुसरण शामिल है। इससे स्पष्ट है कि नव-बौद्ध संस्कृति नकार और निर्माण—दोनों प्रक्रियाओं से बनती है: एक ओर जाति-पोषक धार्मिक प्रतीकों का त्याग, दूसरी ओर वैकल्पिक नैतिक-सांस्कृतिक जीवन-पद्धति का निर्माण।

सांस्कृतिक स्तर पर एक और परिवर्तन यह है कि "शुद्धता-अशुद्धता" का ब्राह्मणवादी व्याकरण चुनौती पाता है। भोजन, उत्सव, सार्वजनिक सहभागिता और सामूहिक बैठकों में वह दूरी कम होती है जो अस्पृश्यता के कारण ऐतिहासिक रूप से थोपी गई थी। तथापि, Mensikova (2023) के अनुसार कई नव-बौद्ध समुदायों को व्यापक समाज में अब भी जाति-स्मृति के आधार पर पढ़ा जाता है; अतः सांस्कृतिक पुनर्जन्म के बावजूद बाहरी सामाजिक दृष्टि तुरंत नहीं बदलती।

विमर्श

इस अध्ययन के निष्कर्ष यह संकेत करते हैं कि नव-बौद्ध धर्मांतरण को केवल धार्मिक परिवर्तन के रूप में समझना विश्लेषणात्मक रूप से अपर्याप्त है। यह प्रक्रिया मूलतः **जाति-आधारित**

The work is licensed under a Creative Commons Attribution Non Commercia 4.0 International License

विनय शील & प्रो० विश्वनाथ मिश्रा (2026). ***धार्मिक परिवर्तन और सामाजिक संबंधों का पुनर्संरचना: नव बौद्ध दलितों के वैवाहिक एवं सामुदायिक व्यवहार का अध्ययन.*** International Journal of Multidisciplinary Research & Reviews. 5(4). 436-456.

सामाजिक संबंधों की आलोचना और उनके वैकल्पिक पुनर्गठन से जुड़ी है। Social Change Theory के आलोक में देखें तो नव-बौद्धता दलित समुदायों द्वारा संचालित एक सचेत सांस्कृतिक परिवर्तन है, जो नए प्रतीकों, अनुष्ठानों, स्मृतियों और नैतिक भाषा का निर्माण करती है। किंतु यह परिवर्तन असमान, चरणबद्ध और सामाजिक-संरचनात्मक सीमाओं से घिरा हुआ है।

Identity Theory यह समझने में मदद करती है कि नव-बौद्ध दलितों के बीच धार्मिक परिवर्तन आत्मसम्मान, सामूहिक गर्व और सामाजिक स्व-परिभाषा का स्रोत है। "अछूत" से "बौद्ध" बनने की प्रक्रिया केवल नामांतरण नहीं, बल्कि मानवीय गरिमा के लिए वैचारिक संघर्ष है। फिर भी Mensikova (2023) का अध्ययन दर्शाता है कि "दलित" और "बौद्ध" के बीच तनाव बना रहता है। इसका कारण यह है कि सामाजिक पहचान हमेशा ऐतिहासिक स्मृति, राजनीतिक संघर्ष और वर्तमान संस्थागत यथार्थ से निर्मित होती है। अतः नव-बौद्ध पहचान पूर्ण विस्मरण नहीं, बल्कि चयनात्मक पुनर्स्मरण और पुनर्परिभाषा है।

Structural Functionalism के अनुसार विवाह, धर्म और परिवार सामाजिक एकीकरण के साधन हैं। नव-बौद्ध संदर्भ में यह आंशिक रूप से सत्य है, क्योंकि बौद्ध विवाह-संस्कार और विहार-आधारित सामुदायिक जीवन नए प्रकार की एकता निर्मित करते हैं। लेकिन यही दृष्टिकोण यह भी दिखाता है कि पुरानी संरचनाएँ सहज रूप से समाप्त नहीं होतीं; वे नए रूपों में टिकती हैं। परिवार और विवाह में पितृसत्ता, समुदाय-आधारित एंडोगैमी और सुरक्षा-आधारित वैवाहिक चयन इसका प्रमाण हैं। अतः नव-बौद्ध धर्मांतरण ने कार्यात्मक संरचनाओं को ध्वस्त नहीं किया, बल्कि उनमें नई नैतिकता प्रविष्ट कराई।

Conflict Theory इस समूची प्रक्रिया की गहराई को सबसे तीखे रूप में पकड़ती है। नव-बौद्ध धर्मांतरण दरअसल ब्राह्मणवादी शक्ति-संरचना के विरुद्ध एक वैचारिक और सांस्कृतिक संघर्ष है। विवाह-क्षेत्र में ब्राह्मणीय कर्मकांड की अस्वीकृति, सामुदायिक जीवन में समानता की नैतिकता, और सार्वजनिक स्मृति में आंबेडकर की केंद्रीयता—ये सब प्रभुत्वशाली सामाजिक अर्थों के विरुद्ध प्रतिरोध की प्रक्रियाएँ हैं। किंतु शक्ति-संबंधों की जटिलता यह है कि जाति केवल धर्म में नहीं, सामाजिक पूँजी, वैवाहिक गठबंधनों, राज्य की श्रेणियों और रोज़मर्रा की सामाजिक पहचान में भी

The work is licensed under a Creative Commons Attribution Non Commercia 4.0 International License

विनय शील & प्रो० विश्वनाथ मिश्रा (2026). ***धार्मिक परिवर्तन और सामाजिक संबंधों का पुनर्संरचना: नव बौद्ध दलितों के वैवाहिक एवं सामुदायिक व्यवहार का अध्ययन.*** International Journal of Multidisciplinary Research & Reviews. 5(4). 436-456.

मौजूद रहती है। इसलिए नव-बौद्ध धर्मांतरण जाति को वैचारिक रूप से चुनौती देता है, पर जाति-संरचना से संघर्ष लंबा और बहुस्तरीय बना रहता है।

आंबेडकरवादी दृष्टिकोण इन निष्कर्षों को सबसे अधिक समग्रता देता है। आंबेडकर ने बौद्ध धर्म को बंधुत्व, समानता और नैतिक समुदाय का आधार माना। इस अध्ययन से स्पष्ट है कि नव-बौद्ध दलितों के सामुदायिक व्यवहार में यह परियोजना काफी हद तक दिखाई देती है—विशेषतः शिक्षा, सामूहिक स्मृति, वैकल्पिक संस्कार और संगठन में। फिर भी विवाह और परिवार के क्षेत्र में जाति और पितृसत्ता की निरंतरता बताती है कि नैतिक क्रांति को सामाजिक-आर्थिक और संस्थागत परिवर्तन के साथ जोड़ना आवश्यक है। दूसरे शब्दों में, आंबेडकर की परियोजना केवल धर्म-परिवर्तन नहीं, बल्कि समाज-परिवर्तन थी; और यही वह कसौटी है जिस पर नव-बौद्ध अनुभव को परखा जाना चाहिए।

निष्कर्ष

यह शोध-पत्र इस निष्कर्ष पर पहुँचता है कि नव-बौद्ध दलितों का धार्मिक परिवर्तन केवल धार्मिक पहचान बदलने की घटना नहीं, बल्कि सामाजिक संबंधों के पुनर्संरचना की ऐतिहासिक प्रक्रिया है। इस प्रक्रिया में तीन स्तर स्पष्ट रूप से उभरते हैं। पहला, **प्रतीकात्मक-वैचारिक स्तर**, जहाँ बौद्ध धर्म सम्मान, समानता और आत्मगौरव की नई भाषा प्रदान करता है। दूसरा, **सामुदायिक-संगठनात्मक स्तर**, जहाँ विहार, स्मृति-स्थल, सामूहिक आयोजन, शिक्षा और संगठन नए सामाजिक नेटवर्क निर्मित करते हैं। तीसरा, **घरेलू और वैवाहिक स्तर**, जहाँ परिवर्तन तो दिखाई देता है, पर पुराने जातिगत और पितृसत्तात्मक पैटर्न पूरी तरह समाप्त नहीं होते।

शोध प्रश्नों के उत्तर में कहा जा सकता है कि नव-बौद्ध धर्मांतरण ने वैवाहिक व्यवहार में ब्राह्मणीय कर्मकांड से दूरी, वैचारिक रूप से जाति-विरोधी दृष्टि और सामुदायिक वैवाहिक नैतिकता का निर्माण किया है; परंतु व्यावहारिक स्तर पर विवाह अभी भी सुरक्षा, नेटवर्क और जाति-स्मृति से प्रभावित रहता है। परिवार और रिश्तेदारी में नैतिक बंधुत्व का विस्तार हुआ है, किंतु पितृसत्ता और नियंत्रित स्त्री-भूमिकाएँ कायम हैं। महिलाओं की शिक्षा, एजेंसी और सार्वजनिक उपस्थिति में वृद्धि

The work is licensed under a Creative Commons Attribution Non Commercia 4.0 International License

विनय शील & प्रो० विश्वनाथ मिश्रा (2026). ***धार्मिक परिवर्तन और सामाजिक संबंधों का पुनर्संरचना: नव बौद्ध दलितों के वैवाहिक एवं सामुदायिक व्यवहार का अध्ययन.*** International Journal of Multidisciplinary Research & Reviews. 5(4). 436-456.

हुई है, पर समानता अभी अधूरी परियोजना है। सांस्कृतिक स्तर पर नव-बौद्ध समुदायों ने अपमानजनक पहचान से बाहर निकलकर एक गरिमामय सामूहिकता का निर्माण किया है।

समाजशास्त्रीय दृष्टि से यह अध्ययन दर्शाता है कि धार्मिक परिवर्तन को केवल आस्था के रूप में पढ़ना गलत होगा; यह सामाजिक न्याय, सामूहिक गरिमा, विवाह-संरचना, लिंग-संबंध और सार्वजनिक संस्कृति के पुनर्गठन से गहराई से जुड़ा है। नव-बौद्ध दलित अनुभव हमें यह समझने में सहायता करता है कि उत्पीड़ित समुदाय धार्मिक भाषा का उपयोग केवल आध्यात्मिक सांत्वना के लिए नहीं, बल्कि सामाजिक लोकतंत्र की वैकल्पिक रचना के लिए भी करते हैं।

नीति निहितार्थ

नव-बौद्ध दलितों के अनुभवों से कुछ महत्वपूर्ण नीतिगत निष्कर्ष निकलते हैं।

पहला, **सामाजिक समावेशन** को केवल संवैधानिक अधिकारों तक सीमित नहीं रखा जा सकता। स्थानीय स्तर पर जाति-आधारित सामाजिक दूरी, विवाह-विरोध, आवासीय पृथक्करण और सांस्कृतिक भेदभाव के विरुद्ध जागरूकता और संस्थागत तंत्र विकसित करना आवश्यक है। स्कूल, पंचायत, शहरी निकाय और विश्वविद्यालय स्तर पर आंबेडकरवादी सामाजिक लोकतंत्र, बौद्ध नैतिकता और संवैधानिक समानता पर आधारित नागरिक शिक्षा कार्यक्रम चलाए जाने चाहिए।

दूसरा, **वैवाहिक समानता** को बढ़ावा देने के लिए अंतर्जातीय और अंतर-समुदाय विवाह करने वाले दंपतियों हेतु सुरक्षा, कानूनी सहायता, परामर्श और पुनर्वास तंत्र को मजबूत किया जाना चाहिए। सम्मान-हिंसा, परिवारगत दबाव और सामाजिक बहिष्कार के मामलों में त्वरित प्रशासनिक प्रतिक्रिया सुनिश्चित हो। नव-बौद्ध समुदायों के भीतर भी वैवाहिक निर्णयों में स्त्री की सहमति और एजेंसी को केंद्र में रखने वाली सामाजिक पहलें विकसित की जानी चाहिए।

तीसरा, **सामुदायिक सशक्तिकरण** के लिए बौद्ध विहारों, सामुदायिक अध्ययन केंद्रों, छात्रावासों, पुस्तकालयों और महिला-संगठनों को सांस्कृतिक-सामाजिक संसाधन केंद्र के रूप में विकसित किया जा सकता है। इससे धार्मिक पहचान और सामाजिक न्याय की राजनीति के बीच रचनात्मक संबंध मजबूत होंगे।

The work is licensed under a Creative Commons Attribution Non Commercia 4.0 International License

विनय शील & प्रो० विश्वनाथ मिश्रा (2026). ***धार्मिक परिवर्तन और सामाजिक संबंधों का पुनर्संरचना: नव बौद्ध दलितों के वैवाहिक एवं सामुदायिक व्यवहार का अध्ययन.*** International Journal of Multidisciplinary Research & Reviews. 5(4). 436-456.

चौथा, **शिक्षा और लैंगिक न्याय** पर विशेष बल आवश्यक है। नव-बौद्ध महिलाओं की शिक्षा, उच्च शिक्षा तक पहुँच, छात्रवृत्ति, डिजिटल साक्षरता, कानूनी जागरूकता और नेतृत्व-प्रशिक्षण को प्राथमिकता दी जानी चाहिए। यदि धार्मिक परिवर्तन को वास्तविक सामाजिक मुक्ति में बदलना है तो स्त्री-एजेंसी को केंद्र में रखना अनिवार्य है।

पाँचवाँ, **राज्यीय श्रेणियों और पहचान-नीति** के बीच मौजूद तनाव को संवेदनशील तरीके से संभालने की आवश्यकता है। बौद्ध पहचान और अनुसूचित जाति के संवैधानिक अधिकारों के बीच जो प्रशासनिक विरोधाभास अनुभव किया जाता है, उसे अपमान या संदेह के बजाय न्याय और ऐतिहासिक वंचना की दृष्टि से समझा जाना चाहिए।

AUTHOR(S) CONTRIBUTION

The writers affirm that they have no connections to, or engagement with, any group or body that provides financial or non-financial assistance for the topics or resources covered in this manuscript.

CONFLICTS OF INTEREST

The authors declared no potential conflicts of interest with respect to the research, authorship, and/or publication of this article.

PLAGIARISM POLICY

All authors declare that any kind of violation of plagiarism, copyright and ethical matters will take care by all authors. Journal and editors are not liable for aforesaid matters.

SOURCES OF FUNDING

The authors received no financial aid to support for the research.

REFERENCES

Ambedkar, B. R. (2014). *Annihilation of caste*. Navayana. (Original work published 1936)

Ambedkar, B. R. (2011). *The Buddha and his Dhamma*. Critical Quest. (Original work published 1957)

Beltz, J. (2005). *Mahar, Buddhist and Dalit: Religious conversion and socio-political emancipation*. Manohar.

Blackburn, A. M. (1993). Religion, kinship and Buddhism: Ambedkar's vision of a moral community. *Journal of the International Association of Buddhist Studies*. https://journals.ub.uni-heidelberg.de/index.php/jiabs/article/download/8805/2712

The work is licensed under a Creative Commons Attribution Non Commercia 4.0 International License

विनय शील & प्रो० विश्वनाथ मिश्रा (2026). ***धार्मिक परिवर्तन और सामाजिक संबंधों का पुनर्संरचना: नव बौद्ध दलितों के वैवाहिक एवं सामुदायिक व्यवहार का अध्ययन.*** International Journal of Multidisciplinary Research & Reviews. 5(4). 436-456.

Choudhary, A. I. (2013). Buddhist identity: A case study of Buddhist women's narratives in Nagpur city. *Politics and Religion Journal, 7*(1), 113–132. https://politicsandreligionjournal.com/index.php/prj/article/download/247/278/287

Ganguly, D. (2004). Buddha, bhakti and superstition: A post-secular reading of Dalit conversion. *Postcolonial Studies*. https://www.tandfonline.com/doi/abs/10.1080/1368879042000210621

Government of India. (1990). *The Constitution (Scheduled Castes) Orders (Amendment) Act, 1990*. Ministry of Social Justice and Empowerment. https://socialjustice.gov.in/writereaddata/UploadFile/CONSTITUTION (SC) ORDER (AMENDMENT) ACT 1990.pdf

Hibbs, C. A. (2013). *The struggle for liberation from caste and gender: Representations of Dalit women in the neo-Buddhist movement* (Doctoral dissertation, York University). https://yorkspace.library.yorku.ca/bitstream/10315/31895/1/Hibbs_Carolyn_A_2013_PhD.pdf

India Human Development Survey. (2022). *Marriage in India* (Marriage Brief). University of Maryland & NCAER. https://ihds.umd.edu/sites/default/files/2022-08/Marriage Brief_1.pdf

Jaffrelot, C. (2005). *Dr Ambedkar and untouchability: Analysing and fighting caste*. Permanent Black.

Marx, K. (1976). *Capital: A critique of political economy* (Vol. 1). Penguin. (Original work published 1867)

Mensikova, T. (2023). Negotiating boundaries between "religious" and "secular": A struggle for the sense of collectivity among Ambedkarite Buddhists in Maharashtra. *Journal of Global Buddhism*. https://www.globalbuddhism.org/article/download/3840/4152

Merton, R. K. (1968). *Social theory and social structure*. Free Press.

Office of the Registrar General & Census Commissioner, India. (2011). *C-01: Population by religious community, Maharashtra*. Census of India. https://censusindia.gov.in/nada/index.php/catalog/11382

Ogburn, W. F. (1922). *Social change with respect to culture and original nature*. B. W. Huebsch.

Omvedt, G. (2003). *Buddhism in India: Challenging Brahmanism and caste*. Sage.

Paik, S. (2014). *Dalit women's education in modern India: Double discrimination*. Routledge.

Parsons, T. (1951). *The social system*. Free Press.

The work is licensed under a Creative Commons Attribution Non Commercia 4.0 International License

विनय शील & प्रो० विश्वनाथ मिश्रा (2026). ***धार्मिक परिवर्तन और सामाजिक संबंधों का पुनर्संरचना: नव बौद्ध दलितों के वैवाहिक एवं सामुदायिक व्यवहार का अध्ययन.*** International Journal of Multidisciplinary Research & Reviews. 5(4). 436-456.

Rege, S. (2006). *Writing caste/writing gender: Reading Dalit women's testimonios*. Zubaan.

Sinha, C. (2020). Dalit leadership, collective pride and struggle for social change among educated Dalits: Contesting the legitimacy of social class mobility approach. *Contemporary Voice of Dalit*. https://journals.sagepub.com/doi/10.1177/2455328X19898411

Tajfel, H., & Turner, J. C. (1979). An integrative theory of intergroup conflict. In W. G. Austin & S. Worchel (Eds.), *The social psychology of intergroup relations* (pp. 33–47). Brooks/Cole.

Tamalapakula, S. (2019). The politics of inter-caste marriage among Dalits in India: The political as personal. *Asian Survey, 59*(2), 315–336. https://online.ucpress.edu/as/article/59/2/315/25088/The-Politics-of-Inter-caste-Marriage-among-Dalits

Zelliot, E. (2001). *From untouchable to Dalit: Essays on the Ambedkar movement*. Manohar.

The work is licensed under a Creative Commons Attribution Non Commercia 4.0 International License